॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

दक्षिणामूर्ति उपनिषद

विषय सूची

॥अथ दक्षिणामूर्त्युपनिषत्॥ 3
दक्षिणामूर्ति उपनिषद 4
शान्तिपाठ 14

॥ श्री हरि ॥

॥अथ दक्षिणामूर्त्युपनिषत्॥

॥ हरिः ॐ ॥

यन्मौनव्याख्यया मौनिपटलं क्षणमात्रतः ।
महामौनपदं याति स हि मे परमा गतिः ॥

ॐ सह नाववतु । सह नौ भुनक्तु । सह वीर्यं करवावहै ।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥ १९॥

परमात्मा हम दोनों गुरु शिष्यों का साथ साथ पालन करे। हमारी रक्षा करें। हम साथ साथ अपने विद्याबल का वर्धन करें। हमारा अध्यान किया हुआ ज्ञान तेजस्वी हो। हम दोनों कभी परस्पर द्वेष न करें।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भगवान् शांति स्वरुप हैं अत: वह मेरे अधिभौतिक, अधिदैविक और अध्यात्मिक तीनो प्रकार के विघ्नों को सर्वथा शान्त करें ।

॥ हरिः ॐ ॥

॥ श्री हरि ॥

॥ दक्षिणामूर्त्युपनिषत्॥

दक्षिणामूर्ति उपनिषद

ॐ ब्रह्मावर्ते महाभाण्डीरवटमूले महासत्राय समेता
महर्षयः शौनकादयस्ते ह समित्पाणयस्तत्त्वजिज्ञासवो
मार्कण्डेयं चिरऽजीविनमुपसमेत्य पप्रच्छुः केन त्वं
चिरं जीवसि केन वानन्दमनुभवसीति । ॥१॥

एक बार ब्रह्मावर्त देश में महाभाण्डीर नाम के वट वृक्ष के नीचे शौनकादि महर्षियों ने दीर्घकाल तक चलने वाला यज्ञ प्रारम्भ किया। (उस समय) शौनकादि ऋषियों ने तत्त्व-ज्ञान प्राप्त करने के लिए समित्पाणि होकर चिरंजीवी मार्कण्डेय ऋषि के सम्मुख आकर प्रश्न किया। हे महर्षे ! आप चिरंजीवी कैसे हुए एवं (दीर्घायु के साथ) कैसे अपार आनन्द की अनुभूति करते हैं?॥१॥

परमरहस्यशिव तत्त्वज्ञानेनेति स होवाच । किं
तत्परमरहस्यशिवतत्त्वज्ञानम् ।
तत्र को देवः । के मन्त्राः । को जपः । का मुद्रा । का निष्ठा ।
किं तज्ज्ञानसाधनम् । कः परिकरः । को बलिः । कः कालः ।
किं तत्स्थानमिति । ॥२-३॥

उन्होंने कहा कि मेरे चिरंजीवी होने का कारण परमगुप्त शिव तत्त्व का ज्ञान है। ऋषियों ने पूछा- वह परम रहस्यमय शिव तत्त्व का ज्ञान क्या है? उसका देवता कौन है? उसके मन्त्र कौन से हैं? (उसका) जप (मन्त्र) क्या है? (उसके लिए) मुद्रा कौन सी है? उसकी निष्ठा क्या है? क्या-क्या उस ज्ञान के साधन हैं? उसका परिकर क्या है? उसमें बलि क्या है? उसका समय क्या है? उसका स्थान क्या है?॥२-३॥

स होवाच । येन दक्षिणामुखः शिवोऽपरोक्षीकृतो
भवति तत्परमरहस्यशिवतत्त्वज्ञानम् । यः सर्वोपरमे काले
सर्वानात्मन्युपसंहृत्य स्वात्मानन्दसुखे मोदते प्रकाशते
वा स देवः । अत्रैते मन्त्ररहस्यश्लोका भवन्ति । मेधा
दक्षिणामूर्तिमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः । गायत्री छन्दः ।
देवता दक्षिणास्यः । मन्त्रेणाङ्गन्यासः । ॐ आदौ नम उच्चार्य
ततो भगवते पदम् । दक्षिणेति पदं पश्चान्मूर्तये पदमुद्धरेत् ॥४-५॥

उन मार्कण्डेय ऋषि ने कहा- जिसके द्वारा दक्षिणामुख शिव का प्राकट्य होता है, वही परम रहस्यमय शिव तत्त्व का ज्ञान है। जो सृष्टि के अन्त में सम्पूर्ण विश्व को अपने भीतर समेट करके अपनी आत्मा में ही आनन्दित रहते एवं स्वप्रकाशित रहते हैं, वे ही इस ज्ञान तत्त्व के देवता हैं॥४-५॥

अस्मच्छब्दं चतुर्थ्यन्तं मेधां प्रज्ञां पदं वदेत् ।
समुच्चार्य ततो वायुबीजं च्छं च ततः पठेत् ।
अग्निजायां ततस्त्वेष चतुर्विंशाक्षरो मनुः ॥६॥

अब मन्त्र के रहस्य को प्रकट करने वाले श्लोक कहे जा रहे हैं। इस मेधा दक्षिणामूर्ति मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि हैं, गायत्री छन्द है और दक्षिणामुख देवता हैं। मन्त्र के द्वारा अंग न्यास करना चाहिए सबसे पहले 'ॐ नमः' शब्द का उच्चारण करके फिर 'भगवते' पद का उच्चारण करे, पुनः 'दक्षिणा' यह पद कहे, फिर 'मूर्तये' पद को कहे, बाद में अस्मद् शब्द के चतुर्थी का एकवचन अर्थात् 'मह्यं' पद कहे तथा बाद में 'मेधा प्रज्ञां' पदों का उच्चारण करे। पुनः 'प्र' का उच्चारण करके तब वायु बीज 'य' का उच्चारण कर आगे 'च्छ' पद बोले, सबसे बाद में अग्नि की स्त्री अर्थात् 'स्वाहा' पद कहे। इस प्रकार चौबीस अक्षर का यह मनु मन्त्र है॥६॥

ध्यानम् ॥

स्फटिकरजतवर्णं मौक्तिकीमक्षमाला ममृतकलशविद्यां ज्ञानमुद्रां करााग्रे ।
दधतमुरगकक्ष्यं चन्द्रचूडं त्रिनेत्रं विधृतविविधभूषं दक्षिणामूर्तिमीडे ॥८॥

ध्यान-

मैं स्फटिक मणि एवं रजत सदृश शुभ्र वर्ण वाले दक्षिणामूर्ति (भगवान् शिव) की स्तुति करता हूँ, जिनके हाथ में क्रमशः ज्ञान मुद्रा, अमृततत्त्वदायिनीविद्या तथा मोतियों की अक्षमाला है, जो त्रिनेत्र-धारी हैं, जिनके उन्नत भाल पर चन्द्रमा का निवास है तथा जिनके कटिभाग

पर सर्प लिपटे हुए हैं एवं जो विविध प्रकार के वेष धारण करने वाले हैं। ॥८॥

मन्त्रेण न्यासः ।
आदौ वेदादिमुच्चार्य स्वराद्यं सविसर्गकम् ।
पञ्चार्णं तत उद्धृत्य अन्तरं सविसर्गकम् ।
अन्ते समुद्धरेत्तारं मनुरेष नवाक्षरः ॥ ९॥

मन्त्र के द्वारा न्यास करें । प्रारम्भ में वेद का आदि अक्षर ॐ का उच्चारण करके स्वर के आदि अक्षर को विसर्ग के साथ बोले, पुन: पंचार्ण अर्थात् 'दक्षिणामूर्ति:' पद का उच्चार करे। इसके बाद विसर्ग के साथ 'अतर' इस पद का उच्चारण करे तथा अन्त में 'तार' अर्थात् ॐ शब्द का उच्चारण करे। यह नवाक्षरी मनु मंत्र है, (मन्त्र इस प्रकार है- ॐ दक्षिणामूर्तिरतरों)॥९॥

मुद्रां भद्रार्थदात्रीं स परशुहरिणं बाहुभिर्बाहुमेकं
जान्वासक्तं दधानो भुजगबिलसमाबद्धकक्ष्यो वटाधः ।
आसीनश्चन्द्रखण्डप्रतिघटितजटाक्षीरगौरस्त्रिनेत्रो
दद्यादाद्यः शुकाद्यैर्मुनिभिरभिवृतो भावशुद्धिं भवो नः ॥१०॥

न) जो एक हाथ में अभय मुद्रा तथा दो हाथों में परशु एवं हरिण (मृगीमुद्रा), एक हाथ को अपनी जंघा पर रखे हुए जो वट वृक्ष के नीचे विराजे हुए हैं एवं जिन्होंने कटिभाग पर नागराज लिपटा रखा है तथा द्वितीया का चन्द्रमा जिनकी जटाओं में सुशोभित है। दुग्ध के समान

गौर वर्ण, त्रिनेत्रधारी तथा शुकादि मुनियों से आवृत भगवान् शंकर का हम ध्यान करते हैं। वे हमारी भावनाओं को शुद्ध करके सद्बुद्धि प्रदान करें॥१०॥

तारं ब्रूंनम उच्चार्य मायां वाग्भवमेव च ।
दक्षिणापदमुच्चार्य ततः स्यान्मूर्तये पदम् ॥ ११॥

ज्ञानं देहि पदं पश्चाद्वह्निजायां ततो न्यसेत् ।
मनुरष्टादशार्णोऽयं सर्वमन्त्रेषु गोपितः ॥ १२॥

सर्वप्रथम तारं अर्थात् ॐ का उच्चारण करे, पुनः 'ब्लूं नमः' कहकर माया बीज अर्थात् 'ह्रीं' बोले, फिर वाग्बीज 'ऐं' तथा 'दक्षिणा' इस पद का उच्चारण करके, बाद में 'मूर्तये' एवं 'ज्ञानं देहि' पद कहे। उसके बाद अग्नि की स्त्री अर्थात् 'स्वाहा' पद बोले (इस प्रकार 'ॐ ब्लूं नमो ह्रीं ऐं दक्षिणामूर्तये ज्ञानं देहि स्वाहा') यह अट्ठारह अक्षर का मनु मन्त्र है, इसका जप करे। सभी मन्त्रों में यह अति गोपनीय मन्त्र है॥११-१२॥

भस्मव्यापाण्डुरङ्गः शशिशकलधरो ज्ञानमृद्राक्षमाला-
वीणापुस्तैर्विराजत्करकमलधरो योगपट्टाभिरामः ।
व्याख्यापीठे निषण्णो मुनिवरनिकरैः सेव्यमानः प्रसन्नः
सव्यालः कृत्तिवासाः सततमवतु नो दक्षिणामूर्तिरीशः ॥ १३॥

भस्म के लेपन से जिसका पूरा शरीर श्वेत हो रहा है, जिन्होंने चन्द्रकला को (मस्तक पर) धारण कर रखा है, जो अपने कर कमलों में रुद्राक्ष माला, वीणा, पुस्तक तथा ज्ञानमुद्रा धारण किये हुए हैं, जो

योगियों के पास रहने वाले पट्ट से सुशोभित हैं, जो व्यास पीठ पर विराजित श्रेष्ठ मुनियों द्वारा सेवित प्रसन्न मुद्राधारी, सर्पों से सुशोभित, व्याघ्रचर्मधारी भगवान् दक्षिणामूर्ति हैं, वे भगवान् सदैव हमारी रक्षा करें॥१३॥

मन्त्रेण न्यासः।
तारं परं रमाबीजं वदेत्सांबशिवाय च ।
तुभ्यं चानलजायां मनुर्द्वादशवर्णकः ॥ १४॥

वीणां करैः पुस्तकमक्षमालां बिभ्राणमभ्राभगलं वराढ्यम् ।
फणीन्द्रकक्ष्यं मुनिभिः शुकाद्यैः सेव्यं वटाधः कृतनीडमीडे ॥ १५॥

मन्त्र के द्वारा न्यास करें – सर्वप्रथम तारं अर्थात् 'ॐ' फिर परा बीज 'ह्रीं' पुनः रमाबीज 'श्रीं' कहे, इसके बाद 'साम्बशिवाय' पुनः 'तुभ्यं' और अन्त में 'स्वाहा' का उच्चारण करे। इस प्रकार यह द्वादश अक्षर वाला मनु मंत्र है। (मन्त्र इस प्रकार बनता है- 'ॐ ह्रीं श्रीं साम्बशिवाय तुभ्यं स्वाहा')। जिन भगवान् शंकर ने अपने हाथों में वीणा, पुस्तक एवं अक्षमाला धारण कर रखी है, एक हाथ जिनका अभय मुद्रा में है तथा श्यामवर्ण के घनघोर बादल की तरह जिनका कण्ठ प्रदेश सुशोभित है, जो श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ हैं, जिनके कटिभाग पर नागराज शोभित हैं, जो वट वृक्ष के नीचे विराजमान हैं तथा शुकादि मुनियों से सेवित हैं, उन भगवान् (शंकर) की मैं प्रार्थना करता हूँ॥१४-१५॥

विष्णू ऋषिरनुष्टुप् छन्दः । देवता दक्षिणास्यः ।

तारं नमो भगवते तुभ्यं वटपदं ततः ।
मूलेति पदमुच्चार्य वासिने पदमुद्धरेत् ॥ १६॥

प्रज्ञामेधापदं पश्चादादिसिद्धिं ततो वदेत् ।
दायिने पदमुच्चार्य मायिने नम उद्धरेत्
वागीशाय ततः पश्चान्महाज्ञानपदं ततः ।
वह्निजायां ततस्त्वेष द्वात्रिंशद्वर्णको मनुः ॥ १७॥

इस मन्त्र के विष्णु ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, दक्षिणा मुख (मूर्ति) देवता हैं, इससे न्यास करे। सर्वप्रथम तार अर्थात् 'ॐ' पुनः 'नमो भगवते तुभ्यं' फिर 'वटमूल' पद उच्चारण करे, इसके बाद 'वासिने' पद कहकर 'वागीशाय' कहे, फिर 'महाज्ञान' एवं 'दायिने मायिने' पद को कहते हुए 'नमः' शब्द का उच्चारण करे। (मन्त्र इस प्रकार हुआ-ॐ नमो भगवते तुभ्यं वटमूलवासिने वागीशाय महाज्ञानदायिने मायिने नमः)॥१६- १७॥

आनुष्टुभो मन्त्रराजः सर्वमन्त्रोत्तमोतमः
मुद्रापुस्तकवह्निनागविलसद्बाहुं प्रसन्नाननं
मुक्ताहारविभूषणं शशिकलाभास्वत्किरीटोज्ज्वलम् । ॥ १८॥
अज्ञानापहमादिमादिमगिरामर्थं भवानीपतिं
न्यग्रोधान्तनिवासिनं परगुरुं ध्यायाम्यभीष्टाप्तये ॥ १९॥
मौनमुद्रा । सोऽहमिति यावदास्थितिः सनिष्ठा भवति। ॥ २०॥

सभी श्रेष्ठ मन्त्रों में उत्तम यह आनुष्टुभमन्त्रराज है। जिनके हाथ अभय मुद्रा, पुस्तक एवं अग्नि तुल्य महाभयंकर सर्पों से सुशोभित हैं, प्रसन्न मुख वाले हैं, मोतियों के हार से सुशोभित हैं, चन्द्रमा की कला

से मुकुट अधिक शोभा पा रहा है, जो अज्ञानान्धकार को समाप्त करने वाले हैं, जिन्हें वाणी से नहीं जाना जा सकता, जो आदि पुरुष हैं,सबके हैं, वटवृक्ष के नीचे निवास करने वाले भगवान् शिव का अभीष्टप्राप्ति के लिए हम ध्यान करते हैं। मौन मुद्रा- वह परमात्मा मैं ही हूँ, इस भाव की पूर्ण स्थिरता मृत्युपर्यन्त बनी रहे,वही निष्ठा है॥१८-२०॥

तदभेदेन मन्त्राम्रेडनं ज्ञानसाधनम् ।
चित्ते तदेकतानता परिकरः । अङ्गचेष्टार्पणं बलिः ।
त्रीणि धामानि कालः । द्वादशान्तपदं स्थानमिति ।
ते ह पुनः श्रद्दधानास्तं प्रत्यूचुः । ॥२१-२५॥

मनु मन्त्रों को परब्रह्म से अभिन्न मान कर बार-बार उच्चारण अर्थात् निरन्तर जप करना ही ज्ञान का साधन है। उस परमात्मा में एकाग्रचित्त होकर ध्यान लगाना ही उपकरण-सामग्री है। शरीर के अंगों अर्थात् इन्द्रियों की चेष्टाओं को बार-बार रोकना एवं उन्हें भगवत्कार्य में नियोजित करना ही 'बलि' है। (स्व अविद्या पद, स्थूल तथा सूक्ष्म बीज के रूप में ये) तीनों धाम ही काल हैं। (परमात्मा को प्राप्त करने का स्थान हृदय या सहस्रार है, इसलिए यह) द्वादशान्त पद ही स्थान है॥२१-२५॥

कथं वाऽस्योदयः । किं स्वरूपम् । को वाऽस्योपासक इति ।
स होवाच । वैराग्यतैलसम्पूर्णे भक्तिवर्तिसमन्विते ।
प्रबोधपूर्णपात्रे तु ज्ञप्तिदीपं विलोकयेत् ॥२६-२७॥

उन श्रद्धावान् ऋषियों ने मार्कण्डेय ऋषि से पुन: प्रश्न किया- किस प्रकार इसका उदय होता है? क्या स्वरूप है? इसका उपासक कौन है? उन्होंने कहा- वैराग्य रूपी तेल से परिपूर्ण, भक्ति रूपी वर्तिका से युक्त ज्ञानरूपी पात्र में ज्ञप्ति (ज्ञान का विषय) रूपी दीपिका अर्थात् सर्वत्र समान रूप से व्याप्त ईश सत्ता का अपनी आत्मा के रूप में दर्शन होता है॥२६-२७॥

मोहान्धकारे निःसारे उदेति स्वयमेव हि ।
वैराग्यमरणिं कृत्वा ज्ञानं कृत्वोत्तरारणिम् ॥ २८॥
गाढतामिस्रसंशान्त्यै गूढमर्थं निवेदयेत् ।
मोहभानुजसंक्रान्तं विवेकाख्यं मृकण्डुजम् ॥ २९॥
तत्त्वाविचारपाशेन बद्धं द्वैतभयातुरम् ।
उज्जीवयन्निजानन्दे स्वस्वरूपेण संस्थितः ॥ ३०॥

भगवद् दर्शन के लिए ज्ञान-भक्ति एवं वैराग्य की आवश्यकता है। इसके आते ही अज्ञानान्धकार समाप्त होकर आत्मारूपी दीपक स्वयं प्रज्वलित हो उठता है। अपने ज्ञानरूपी दण्ड से वैराग्य रूपी अरणी में मन्थन (चिन्तन) करके अज्ञानान्धकार के समापन के लिए गूढ़ अर्थ अर्थात् परमतत्त्व को जानने का प्रयास करना चाहिए। उस परमतत्त्व का दर्शन, निरन्तर ज्ञान और वैराग्य के परिपालन एवं चिन्तन से ही सम्भव है। परमतत्त्व के बारे में चिन्तन न करना ही पाश है, उक्त पाश से बँधे हुए द्वैतवाद से भयभीत-व्याकुल, मोहरूपी शनि अर्थात् मृत्यु के मुँह में गये हुए विवेक रूप मार्कण्डेय को परमतत्त्व का चिन्तन फिर से जीवन दान करते हुए अर्थात् आत्म-तत्त्व का बोध

कराते हुए परमात्मा के परम आनन्द (अपने स्वरूप) में स्थित कर देता है॥२८-३०॥

शेमुषी दक्षिणा प्रोक्ता सा यस्याभीक्षणे मुखम् ।
दक्षिणाभिमुखः प्रोक्तः शिवोऽसौ ब्रह्मवादिभिः ॥ ३१॥
सर्गादिकाले भगवान्विरिञ्चिरुपास्यैनं सर्गसामर्थ्यमाप्य ।
तुतोष चित्ते वाञ्छितार्थांश्च लब्ध्वा धन्यः सोपास्योपासको भवति धाता
॥ ३२॥

ब्रह्म को प्रकाशित करने वाली तत्त्वज्ञान रूपिणी बुद्धि को ही दक्षिणा कहा है, वही ब्रह्म साक्षात्कार के लिए द्वार अर्थात् मुँह है। इसलिए ब्रह्म-ज्ञानियों ने उसी को 'दक्षिणामुख' नामक शिव कहा है। सृष्टि के आदि में प्रजापति ब्रह्माजी ने इनकी ही उपासना की । उसी से शक्ति प्राप्त करके सृष्टि की रचना रूपी अपने मनोरथ को पूर्ण किया और प्रसन्न हुए, इसलिए प्रजापति ब्रह्मा ही इनके उपासक हैं॥३१-३२॥

य इमां परमरहस्यशिवतत्त्वविद्यामधीते स सर्वपापेभ्यो मुक्तो भवति।
य एवं वेद स कैवल्यमनुभवतीत्युपनिषत् ॥ ॥३३॥

इस शिवतत्त्वरूपी गुप्त विद्या का जो पाठ करता है, वह समस्त कल्मषों से छूट जाता है एवं इसको अच्छी तरह से जानने तथा मनन, चिन्तन करने वाला मोक्ष को प्राप्त हो जाता है। ऐसी यह उपनिषद् है

॥हरिः ॐ ॥

शान्तिपाठ

ॐ सह नाववतु । सह नौ भुनक्तु । सह वीर्यं करवावहै ।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥ १९॥

परमात्मा हम दोनों गुरु शिष्यों का साथ साथ पालन करे। हमारी रक्षा करें। हम साथ साथ अपने विद्याबल का वर्धन करें। हमारा अध्यान किया हुआ ज्ञान तेजस्वी हो। हम दोनों कभी परस्पर द्वेष न करें।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भगवान् शांति स्वरुप हैं अत: वह मेरे अधिभौतिक, अधिदैविक और अध्यात्मिक तीनो प्रकार के विघ्नों को सर्वथा शान्त करें ।

॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥

॥ इति दक्षिणामूर्त्युपनिषत्समाप्ता ॥

॥ दक्षिणामूर्ति उपनिषद समात ॥

संकलनकर्ता:

श्री मनीष त्यागी

संस्थापक एवं अध्यक्ष
श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

www.shdvef.com

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय: ॥